ISSN–2277- 8721

EIIRJ Electronic International Interdisciplinary Research Journal

Volume–XIII, Issues – I (Special Issues -II) Jan – Feb 2024

OPEN ACCESS Original Research Article

तुलसीदास की नारी विषयक अवधारणा एवं आधुनिक नारीवादी दृष्टि

डॉ. वाघमारे के. एच.

हिंदी विभाग,

कालिकादेवी महाविद्यालय, शिरूर(कासार), जि.बीड

प्रस्तावना : अपने स्नेह, त्याग, सहिष्णुता आदि गुणों से परिवार तथा समाज को आगे बढ़ाने के कारण नारी को पृथ्वी की उपमा दी गई है। भारत के धर्म ग्रंथों में नारी को राष्ट्र के लिए शक्ति, पुरूष के लिए प्रेरणा, संतान के लिए वात्सल्य की मूर्ति, सामाजिकता के लिए आदर्श तथा सम्मान देने वालों के लिए वरदायिनी बताया गया है। सृष्टि के सृजन के लिए दुष्टों का संहार करने हेतु महाकाली रूप धारण करने वाली इस स्त्री-शक्ति की तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' के प्रारंभ में इस प्रकार स्तुति की हैं –

"भवानी श्करी वन्दे श्रद्धा विश्वास रूपिणौ,
याभ्यां बिना न पश्यन्ति सिद्धा स्वान्त : स्थमीश्वरम् ।"[1]

किसी भी देश व समाज के उत्थान या पतन का प्रमुख प्रमाण उस समाज में नारी की स्थिति होती है। नारी संसार की शक्ति का प्रमुख केन्द्र है। वह मातृत्व की भी पहचान है। उसके बिना सृष्टि अधूरी है तथा पुरूष का जीवन भी नीरस व अपूर्ण है। भारतीय दर्शन एवं साहित्य में नारी को सदैव सम्मानीय माना गया है। नारी का आध्यात्मिक और लौकिक स्वरूप क्या है उसका मानव के आंतरिक और बाह्य जीवन से क्या संबंध है तथा पुरूष के जीवन में नारी का क्या महात्व है, इन सब बातों का भावनात्मक अन्वेषण साहित्य में होता है।

भारतीय साहित्य के रामायण और महाभारत जैसे महान ग्रंथों में जीवन के अन्य समस्त विषयों की भांति नारी चरित्र का वैविध्यपूर्ण चित्रण भी मिलता है। रामकथा पर आधारित रचनाओं की दृष्टि से महर्षि वाल्मीकि के पश्चात गोस्वामी तुलसीदास का नाम सर्वोपरि है। उनके काव्य में रामकथा से जुड़े सभी छोटे-बड़े चरित्रों के अंकन अथवा उनसे संबंधित टिप्पणियाँ विशेष महत्वपूर्ण है। गोस्वामी जी ने उस काल में असहाय और तृषित मानव जीवन को दिशा देने हेतु एक भगीरथ प्रयत्न किया। इसमें उनकी रचना 'रामचरितमानस' सभी दृष्टियों से एक अद्वितीय रचना सिद्ध हुई। भारतीय समाज में एक आदर्श 'आधार संहिता' के रूप में प्रतिष्ठित यह कृति भारतीय संस्कृति की पहचान बनने के साथ-साथ उसके उत्थान में भी सहायक हुई। अपनी रचनाओं के माध्यम से गोस्वामी जी एक ओर नारी की दयनीय स्थिति के प्रति सहानुभीति दर्शाते दिखते है।

Copyright © 2024 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY-NC 4.0) which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium for non-commercial use provided the original author and source are credited.

ISSN–2277- 8721

EIIRJ Electronic International Interdisciplinary Research Journal

Volume–XIII, Issues – I (Special Issues -II) Jan – Feb 2024

OPEN ACCESS Original Research Article

प्राचिन भारत में नारी का स्थान तथा स्थिति की जानकारी के लिए सर्वप्रथम वेदों, पुराणों व स्मृतियों में उल्लिखित नारी-दृष्टि का अवलोकन करना आवश्यक है। इससे यह अनुमान भी लगाया जा सकता है कि प्राचीन समय में नारी के प्रति समाज का क्या दृष्टिकोण था। अध्ययनों से पता चलता है कि उस काल में सभी धर्मो तथा समुदायों को समान रूप से सम्मान दिया जाता था। प्राचिन मनीषियों ने लोगों में धर्म के प्रति गहरी श्रद्धा व आस्था भाव जागृत करने का निरंतर प्रयास किया। उन्हीं के अथक प्रयासों से भारतीय संस्कृति का स्वर्णिम इतिहास निर्मित हुआ। वैदिक साहित्य में गृहस्थी की मूल इकाई नारी को ही माना गया है, क्योंकि गृहस्थाश्रम के सभी महत्वपूर्ण कार्य नारी के द्वारा ही संपन्न किये जाते है। धर्म, परिवार और समाज के प्रति कर्तव्य पालन के कारण ही प्राचीन समाज में सूर्या, अपाला, घोषा, सती, सीता, अनुसुइया, भक्तिन शबरी, सावित्री आदि को आदर्श माना गया। आर्य पुरूष ने नारी को अपनी अर्द्धांगिनी, सहचरी व सहधर्मिणी माना तथा उसे समाज मे विशिष्ट, गौरवपूर्ण उच्च स्थान दिया। मान-सम्मान की इसी भावना से प्रोत्साहित होकर नारी ने भी घर-परिवार व आंतरिक जीवन के सभी उत्तरदायित्वों का आदरपूर्वक निर्वाह किया तथा पुरूष ने भी बाह्य जीवन का उत्तरदायित्व पूर्ण किया।

भारत की प्राचीनतम सभ्यता के अवशेष ईसा से 5000 ई.पू. मोहन जोदड़ो और हडप्पा की सभ्यताओं में मिलते हैं। इस सभ्यता में नारी का स्थान पूजनीय था। डॉ. राजकिशोर सिंह के अनुसार- "मोहन जोदड़ो, हडप्पा की खुदाई में असंख्य देवियों की मूर्तियाँ प्राप्त होने का विवरण इस बात को प्रमाणित करता है कि प्राचीन सभ्यता के लोग मातृदेवी के उपासक थे। इस समाज में स्त्रियों कि स्थिति बहुत अच्छी थी, स्त्रियों का सम्मान था, क्योंकि मातृशक्ति को वे देवी तथा उपास्य के रूप में मानते थे। यहाँ के परिवार मातृसत्तात्मक थे, जिनमें स्त्रियों का स्थान तथा महत्व अधिक था ।" [2] हिंदी की प्रसिद्ध लेखिका प्रभा खेतान प्राचीन काल की नारी के विषय में लिखती हैं कि –"उस समय कबिलाई संगठन था। स्त्री कबीले से जुड़ी थी। अत: स्त्री कबीले की जीवनदायिनी शक्ति बनी। परिवार में उसे प्राथमिकता थी। वंश का नाम माँ से चलता था, सामूहिक संपत्ति का स्वामित्व भी औरत के पास था ।" [3] इस तरह से नारी ने अपने समस्त रूपों से पुरूष को जीवन, प्रोत्साहन, संवर्द्धन व शक्ति दी है। सामाजिक विकास का मानदण्ड नारी ही है। वैदिक काल को हम महिला सशक्तिकरण का स्वर्णिम काल भी कहते हैं। ऋग्वेद के कुछ सूत्र महिला ऋषिकाओं के द्वारा भी रचे गये हैं। दर्शन व उपनिषदों के क्षेत्र में गार्गी का नाम सर्वविदित है। स्त्रियाँ गृहस्वामिनी तो होती ही थी, किंतु उनका कर्म क्षेत्र केवल घरों तक ही सीमित नहीं था। क्षत्रिय कुल में उत्पन्न नारियों को युद्ध में सारस्थ करने का अधिकार था। नारियाँ असाधारण विचारिका और पंडिता भी होती थी।

भारतीय संस्कृति का मूलाधार धर्म है। धार्मिक परिवर्तनों से किसी भी समाज की परिस्थितियों को बदला जा सकता है। चूँकि मध्यकाल के प्रारंभ में धर्म अपने मार्ग से भटक गया था, अत: उसे किसी महत्वपूर्ण संबल की आवश्यकता पड़ने लगी थी। उस काल में नारी का मान-सन्मान कम होने लगा था। नारी अपने प्राचीन स्वरूप से नीचे आकर पुरूष के विलास की सामग्री बन गयी थी। धर्म और नारी दृष्टि में पतन साथ-साथ दिखाई देने लगा था। डॉ. गिरधर प्रसाद शर्मा के अनुसार-

ISSN–2277- 8721

EIIRJ Electronic International Interdisciplinary Research Journal

Volume–XIII, Issues – I (Special Issues -II) Jan – Feb 2024

OPEN ACCESS Original Research Article

"राजाओं पुरोहितों ने मिलकर नारियों को आध्यात्मिक व धार्मिक ज्ञान-प्राप्ति से वंचित कर दिया। मानसिक विकास के अभाव में नारियाँ या तो अंधविश्वासी बन गयी थीं या फिर उत्तरदायित्वहीन सेविकाएँ। इन सेविताओं को कुछ को आकर्षक नामों से विभूषित किया गया था, मूलत: ये सेविकाएँ ही थीं। सामंतों के इशारे पर इन्हें नाचना पड़ता था।"[4]

प्राचीन काल में पुरूष के समान अधिकार संपन्न नारी- मध्यकालीन प्रतिकूल परिस्थितियों की भोग बनकर पुरूष की संपत्ति और दासत्व का शिकार बन गई। आधुनिक काल के प्रारंभ में भारतीय नारी का यही रूप हमारे सामने आता है। सदियों ये वह शिक्षा, सत्ता, समानता आदि सभी अधिकारों से वंचित होकर अज्ञान, अंधविश्वास और कुरीतियों में जकड़ी हुई थी। भारत केपतन और दीर्घावधि के दासत्व का एक बड़ा कारण स्त्रियों की उपेक्षा भी रहा। नवजागरण कालीन आंदोलन, स्वाधीनता आंदोलन तथा म. गाँधी आदि युग-पुरूषों के नारी उत्थान के कार्यक्रमों तथा पश्चिमी देशों के स्त्री-मुक्ति आंदोलनों के प्रभाव के फलस्वरूप नारी खुली हवा में सांस लेने लगी। नारी स्वातंत्र्य की परिभाषा देश, काल परिस्थितियों के आधार पर हर युग में बदलती रही है। कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि नारी का अपना कोई स्वतंत्र्य अस्तित्व है ही नहीं और कभी वह पूर्ण स्वतंत्र्य दिखाई देती है। नारी उत्थान के क्षेत्र में जागरण की पहल तभी की जा सकती है जब नारी स्वयं जागृत हो। जैसा कि डॉ. राजरानी शर्मा लिखती हैं-" जागरण तो हमेशा ही श्रेयकर है, त्रुटी वहीं पैदा होती है जहाँ जागरण के साथ दिशाभ्रम आकर जुड़ जाता है। पुराने मूल्य नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं। तोड़ने की प्रक्रिया में अच्छा-बुरा सब टूट जाता है और नये मूल्यों के निर्माण की कोई रूप रेखा नहीं बन पाती। परंतु हमारे यहाँ की नारी ने तो अभी पूरी तरह से विद्रोह किया ही नहीं है। अपने व्यक्तित्व के कुछ पहलुओं के प्रति वह जागरूक हुई है और इससे जुड़ी हुई रूढ़ियों से वह मुक्त होने के लिए छटपटा रही है"। [5]

उन्नीसवीं शताब्दी का आरंभिक काल नारी की स्थिति की दृष्टि से सबसे दयनीय रहा। इस समय भारतीय समाज में अनेक कुपथाएँ फैली हुई थी, जिन्हें मिटाए वगैर किसी आंदोलन की सफलता संभव नहीं थी। इस वास्तविकता को समझ कर ही हमारे देश के महान समाज सुधारकों की दृष्टि नारी की ओर गई और नारी जागृति संबंधी विभिन्न आंदोलनों का सूत्रपात हुआ। नारी ने भी वेदना की शय्या से करवट बदली और शनै: शनै: घर की चारदीवारी को लांध कर बाहर निकलने का प्रयास किया। इन सुधारकों में पमुख रूप से राजा राममोहन राय, ईश्वर चंद विद्यासागर, स्वामी दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, महर्षि अरविंद एवं म. गाँधी अग्रणी थे। इन सभी महापुरूषों के अथक पयासों से नारी जीवन को जकड़ने वाली समाज में व्याप्त विभिन्न कुप्रथाओं, सतीप्रथा, बालविवाह, पर्दा प्रथा, अनमेल विवाह आदि को रोकने का प्रयास किया गया। उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी के नारी जागरण आंदोलन में हमे एक विशिष्ट बात यह दिखाई देती है कि इन आंदोलनों के अग्रदूत भी पुरूष ही बनें। नारी को ऊपर उठाने वाली प्रथम दृष्टि भी पुरूषों की ही रही। सभी पुरूष सुधारकों ने मिलकर नारी को विभिन्न कुरीतियों से मुक्ति दिलाई और यह सिद्ध किया कि जिस प्रकार पुरूष नारी के बिना अधूरा है, उसी प्रकार नारी भी पुरूष सत्ता के बगैर कुछ नहीं कर सकती। भारतीय स्त्रियों का मुक्ति आंदोलन पश्चिमी धारणा से एकदम

ISSN–2277- 8721

EIIRJ Electronic International Interdisciplinary Research Journal

Volume–XIII, Issues – I (Special Issues -II) Jan – Feb 2024

OPEN ACCESS Original Research Article

भिन्न रहा है। भारत में कभी भी, किसी भी युग में स्त्रियों ने अपने अधिकारों के लिए पुरूषों के विरूद्ध मोर्चा नहीं बांधा। नारी अधिकारों के प्राचीन भारतीय उत्कर्ष की बात छोड़ दें, तो भी नवजागरण काल से लेकर स्वराज्य संघर्ष की पूरी अवधि में भारतीय स्त्रियाँ सुधारक और मनीषी पुरूषों के दिग्दर्शन में उनके कंधे से कंधा मिलाकर सामाजिक रूढ़ियों और देश के गुलामी के विरूद्ध क साथ लड़ती दिखाई देंगी। गाँधी जी महिलाओं की शक्ति पुंज व समाज की मजबूत बुनियाद कहा करते थे। आजादी से आज तक महिलाएँ गाँधी जी की सोच के अनुसार काफी हद तक खरी उतरी हैं। आज नारियों ने यह सिद्ध करके दिखा दिया है कि वे कोई पाषाण मूर्ति नहीं है, जिन्हें प्रतिष्ठित करके उनकी पूजा की जाये या वे केवल घरेलू प्राणी नहीं है, जो सर पर बोझा ढोने और अत्यचारों को सहन करने वाली मूक तस्वीर बन कर रह जाएं। वह देश के संपूर्ण विकास व प्रगति कार्यों का रचनात्मक मार्गदर्शन करने की क्षमता रखती है। भारतीय नारियों की प्रगति की श्रेणी में अंतरिक्ष यात्री बनी कल्पना चावला, सुनीता विलियम्स, पेप्सी की इंदिरा नूई, मोटोरोला की चीफ टेक्निकल ऑफिसर पदमजा, बी.बी,सी. की चेअर पर्सन चित्रा भरूचा, मैगसेस विजेता इला भट्ट, अरूधंति राय और किरण देसाई, एवरेस्ट पर विजय करने वाली बछेन्द्री पाल, गायन के क्षेत्र में लता जी की आवाज की गूँज और खेलों में पी.टी. उषा, मल्लेश्वरी, सायना नेहवाल, सानिया मिर्मा जैसी महिलाओं ने यह दिखा दिया है कि हम किसी से कम नहीं है। 1975 के अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित होने के बाद विकसित भारत की एक नयी तस्वीर बनी। देश में सूचना प्रौद्योगिकी के सॉफ्टवेयर प्रोग्रामर्स में 38 फिसदी महिलाएँ हैं। अब वह संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती हुई दिखाई देती है।

आधुनिक नरी की अब तक उल्लिखित उपलब्धियों को देखते हुए पतीत होता है कि आज नारी पूर्णत: तथा सामाजिक दृष्टि से काफी हद तक समानता-स्वाधीनता पाप्त करने और शैक्षिक तथा आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनने के बाद भी नारी का जीवन अभी तक अपूर्ण, असुरक्षित और पराधीन बना हुआ है। एक ओर वह अभी भी समाज की जड़ मान्यताओं के बंधनों में जकड़ी हुई है और दूसरी ओर स्वतंत्र्य उन्मुक्त बनकर नारी स्वभाव की मूल विशेषताओं एवं सीमाओं की उपेक्षा करती हुई बहु भोगवादी संस्कृति के चंगुल में फंस रही है। वर्तमान युग के मूल्य विघटन का सीधा परिणाम नारी की विभिन्न भूमिकाओं में आये परिवर्तन के रूप में देखा जा सकता है। आज नारी स्वयं अपने अस्तित्व को तलाश और संतुष्ट रहने के सही पैमाने ढूँढे। वह नये मूल्य बनाये, तभी वह सामान्य जीवन जी सकती है। दूसरों की परिभाषाओं को अपने पर लादना गुलामी है और गुलाम का अपना निजी जीवन नहीं होता। वह गुलामी चाहे संस्कारों की हो या सुविधाओं की उससे हानि ही होती है। पराधीनता स्वप्न में भी सुख नहीं दे सकती। नीरा देसाई कहती हैं कि- "भारत की स्त्रियों ने पहली बार यह अनुभव किया कि उनका जीवन बेकार या ध्येय विहीन नहीं है। नारी का कर्तव्य मात्र अपने स्वामी को प्रसन्न रखना ही नहीं है, वरन् जीवन के अन्य उत्तरदायित्व निभाना तथा राष्ट्र की प्रगति के लिए त्याग करना भी है। ऐसी धारणा सहज ही परदे की प्रथा को समाप्त करने में सहाय्यक होती है तथा स्त्रियों में निर्भयता तथा आत्मविश्वास उत्पन्न करती है। इस विचारधारा से प्रभावित होकर कई महिलांओं ने राजनीति को अजीवन कार्यक्षेत्र बना लिया।

ISSN–2277- 8721

EIIRJ Electronic International Interdisciplinary Research Journal

Volume–XIII, Issues – I (Special Issues -II) Jan – Feb 2024

OPEN ACCESS Original Research Article

अभी तक स्त्री-आंदोलनों का नेतृत्व पुरूष ही करते थे। उसके बदले अब स्त्रियाँ अपने कार्य का स्वतंत्र्य संचालन स्वयं करने लगी"। [6]

नारी समाज का एक महत्वपूर्ण अंग ही नहीं, उसकी निर्मात्री भी रही है। किसी भी युग की सभ्यता के उन्नयन की कसौटी उस युग के समाज की नारी की स्थिति से आंकी जा सकती है। भारत के वैदिक समाज में नारी को पूर्ण सम्मान मिला था। आधुनिक काल में थोर समाजसुधारकों ने समाज की उन्नत्ति का आधार नारी को मानते हुए सामाजिक उन्नत्ति के लिए नारी की उन्नत्ति को आवश्यक माना। इसके फलस्वरूप नारी शिक्षा को आवश्यक माना गया तथा वह सामाजिक विकास के सभी क्षेत्रों में आगे बढ़ी और नारी की स्थिति में एक क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ।

आज की नारी समझने लगी है कि हमारे परंपरागत मूल्य और नैतिक आदर्श हमें बार-बार सही सीख देते हैं कि पति ही परमेश्वर है; चाहे वह अपना कर्तव्य-पालन पूर्ण कर रहा है या नहीं। पत्नी को हमेशा पतिव्रता धर्म निभाना है; जीवनभर आधिनता ही स्वीकार करनी है। उसकी अपनी स्वतंत्र पहचान नहीं है। वह किसी की बहू, किसी की पुत्री, किसी की पत्नी, किसी की माता और किसी की दासी या सेविका के नाम से ही पहचानी जाती है। नारी के चाओं ओर पुरूषत्व का प्रबल घेरा है; जो नारी को उसके अबला रूप मे ही देखना चाहता है। वह नारी को अपनी स्वतंत्र्य पहचान बनाने ही नही देना चाहता। इस पुरूषवादी दृष्टि ने नारी को श्रद्धा व दया की पात्र बताकर उसकी तुलना धरती से की, ताकि वह मौन प्रतिमा बनकर धरती की भाँति सभी अत्याचारों को सहती रहे। इसका एक प्रमुख कारण वह स्वयं भी है क्योंकि आज भी वह परंपराओं के दो राहें पर खड़ी है। डॉ. राजेन्द्र मिश्र इस विषय पर अपने विचार प्रकट करती हुई कहती है कि-"शहरों की नवीन चेतना को अपनाने वाली नारी में नवीन मुल्यों और पुरानी परंपराओं के प्रति द्वंद्वात्मक स्थिति चल रही है। कुछ इस द्वंद्वांत्मक स्थिति से उबरकर परंपराओं के पार जाने के लिए संघर्षरत है जो कुछ इसके बंधन को स्वीकृति प्रदान कर द्वंद्व के बंधन में जकड़ी अपने आपको असहाय महसूस करती है"। [7]

इस तरह से आधुनिक युग जीवन के समस्त क्षेत्रों में क नवीन दृष्टिकोण लेकर अवतरित हुआ। इसमें नारी विषयक दृष्टि भी बदली। वास्तव में आधुनिकता एक दृष्टि है; जिसके दो पहलु हैं। पहला पहलू प्राचीन रूढ़िवादी परंपराओं सिद्धातों व विचारों का खण्डन है तथा दूसरा पहलू पुरातन परंपराओं का युगीन दृष्टि से पुनर्मुल्यांकन करते हुए नये आयामों का समावेश है। आज की दृष्टि मनुष्य को मनुष्य ही मानकर उसके निजी अस्तित्व एवं मानसिकता को विशेष महत्व देने की है। वह सहानुभूतियों के सबंल द्वारा जीवन को नहीं जीना चाहता। नर हो या नही, उसे अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व की तलाश है। आज की नारी पति व परिवार की नयी परिभाषा गढ़ रही है। वह तुलसी के नारीवादी चिंतन का खंडन करती हुई पति के मूल दायित्वों को इंगित कर उससे भी कुछ अपेक्षाएँ रख रही है। स्त्री विमर्श पर चिंतन करने वाले डॉ. विनय कुमार पाठक कहते हैं कि-"आज के विमर्श का केंद्रीय तत्व है कि सारी खुशियाँ पति और उसकी आज्ञाओं को आँख मूँद कर स्वीकार कर लेने में ही नहीं है। स्त्री की अपनी स्वतंत्र्य इयत्ता है। वह पति के बिना भी जीवन का अर्थ तलाशती है। अपने होने का एहसास ही नारी चेतना है "। [8]

ISSN–2277- 8721

EIIRJ Electronic International Interdisciplinary Research Journal

Volume–XIII, Issues – I (Special Issues -II) Jan – Feb 2024

OPEN ACCESS Original Research Article

सारांश : आज समाज में सर्वत्र प्राजीन एवं नवीन जीवन के बीच मूल्यों संघर्ष हो रहा है। 'रामचरितमानस' तुलसीदास जी की सभी दृष्टियों से एक अनोखी रचना है। यह सभी वर्गों व समुदायों के लिए है। इसमें चित्रित नारी पात्रों का भी अपना एक विशिष्ट स्थान है। ये सभी नारी पात्र तुलसीयुगीन परिस्थितियों के आधार पर विकसित हुए हैं इनमें पात्रों का विवेचन युगीन मानदण्डों के आधार पर किया है। आधुनिक दृष्टि से यदि चिंतन किया जाए तो नारी के विषय में दिये गये पुराने आदर्श अपने नवीन स्वरूप को धारण करते समय काल और परिस्थितियों के अनुसार प्रभावित व परिवर्तित होते हैं। 'रामचरितमानस' के आदर्श भारतीय जनमानस में इतने रस बस चुके है कि इनको नष्ट करना सहज नहीं है। आधुनिक जीवन बोध की दृष्टि से यदि इनमें कुछ संशोधन किया जाए तो यह और अधिक रोचन बन सकती है।

भक्तिकालीन कवियों में तुलसीदासजी का अपना क विशिष्ट स्थान है। वे आदर्शवादी, समन्वयवादी तथा लोकनायक के रूप में प्रसिद्ध है। लोककल्याण से प्रभावित उनकी रचना-दृष्टि उनके संपूर्ण साहित्य को सर्वोच्च शिखर रप प्रतिष्ठित करती है। वे युगीन परिस्थितियों के प्रति हमेशा सजग रहे। तुलसीदासजी की साहित्य रचना की प्रमुख विशेषता यह रही है कि उन्होंने 'नाना पुराण निगमागम सम्मत' दृष्टि का संबल लेकर प्राचीन काव्य परंपराओं का केवल अध्ययन मनन ही नहीं किया, अपितु उसमें अपने भावों और चिंतन को भी जोड़ा। उन्होंने समाज के सभी आदर्शों, सामाजिक-नैतिक मूल्यों की परिकल्पना से युक्त काव्य रचना की। उनकी दृष्टि अलौकिक थी। वे समाज को एक स्वर्णिम आलोक देना चाहते थे। इसी कारण उन्होंने समाज के हर वर्ग, चाहे वह नर हो अथवा नारी; वृद्ध हो या बालक; राजा हो या सेवक; उच्च जाति का हो या निम्न; सभी के लिए आदर्श मानदण्ड स्थापित किए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीताप्रेस गोरखपुर, संस्करण संवत् 2067, बा.का.श्लोक-2
2. डॉ. राजकिशोर सिंह, भारतीय संस्कृति, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा सं. 1986, पृ. क्रं. 10
3. प्रभा खेतान, 'सीमोन दीवोउवार'- स्त्री उपेक्षिता, हिंद पाकेट बुक्स, दिल्ली, सं. 2002, पृ.क्रं.53
4. डॉ. गिरीधर प्रसाद शर्मा, मध्ययुगीन हिंदी भक्ति काव्य का विवेचन', तक्षशिला प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 1985, पृ. क्रं. 204
5. डॉ.राजरानी शर्मा, हिंदी उपन्योसों में रूढ़ि मुक्त नारी, साहित्य मंडल, सं. 1989, पृ. क्रं. 64
6. देसाई, नीरा, - भारतीय समाज में नारी, मैकमिलन प्रैस इंडिया लिं, दिल्ली, सं.1982, पृ. 94-95
7. मिश्र राजेन्द्र, महादेवी वर्मा का रचना संसार, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली, संस्करण.2007, पृ. क्रं. 27
8. पाठक विनयकुमार, स्त्री विमर्श, भावना प्रकाशन, पटपटगंज दिल्ली, सं.2005, पृ. क्रं. 125

Cite This Article:

डॉ. वाघमारे के.एच. ***(2024).*** *तुलसीदास की नारी विषयक अवधारणा एवं आधुनिक नारीवादी दृष्टि*, In Electronic International Interdisciplinary Research Journal: Vol. XIII (Number I, pp. 13–18)

EIIRJ. https://doi.org/10.5281/zenodo.10651964